थार की गहराई से

रामेश्वर बागड़िया

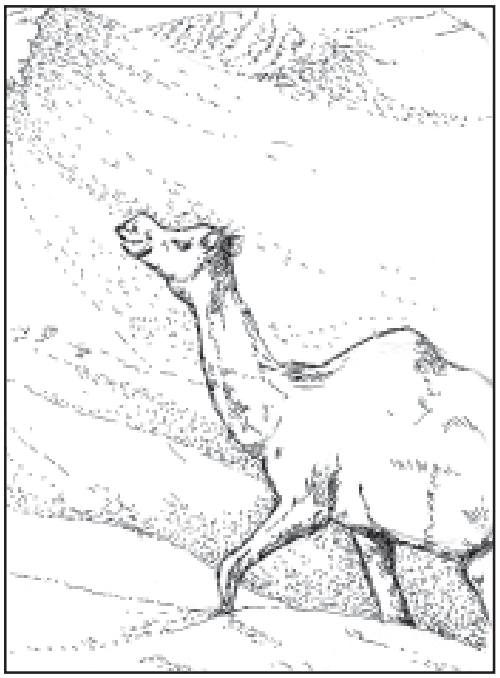

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

नव जनवाचन आंदोलन

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने
'सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट' के सहयोग से किया है।
इस आंदोलन का मकसद आम जनता में
पठन-पाठन संस्कृति विकसित करना है।

थार की गहराई से रामेश्वर बागड़िया	***Thar Ki Geharai Se*** **Rameshwar Bagariya**
पुस्तकमाला संपादक तापोश चक्रवर्ती	***Series Editor*** **Taposh Chakravorty**
कॉपी संपादक राधेश्याम मंगोलपुरी	***Copy Editor*** **Radheshyam Mangolpuri**
रेखांकन सुनयना बी.पांडे	***Illustration*** **Sunayana B.Pande**
कवर एवं ग्राफिक्स जगमोहन	***Cover and Graphics*** **Jagmohan**
प्रथम संस्करण सितम्बर, 2007	***First Edition*** **September, 2007**
सहयोग राशि 20 रुपये	***Contribution*** **Rs. 20**
मुद्रण सन शाइन ऑफसेट नई दिल्ली - 110 018	***Printing*** **Sun Shine Offset** **New Delhi - 110 018**

Publication and Distribution

Bharat Gyan Vigyan Samiti

Basement of Y.W.A. Hostel No. II, G-Block, Saket , New Delhi - 110 017

Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773

Email : bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com

website: www. bgvs.org

BGVS SEPTEMBER 2007 2K 2000 NJVA 0061/2007

हम लेखकों के विचारों की स्वतंत्रता में विश्वास करते हैं, सहमति/असहमति अलग बात है।

थार की गहराई से

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

थार की गहराई से

रेगिस्तान का अपना आकर्षण है। जैसे समुद्र के किनारे खड़ा होने पर प्रकृति की विराटता का एहसास होता है, उसी प्रकार रेगिस्तान के बीच से गुजरने पर भी। अफ्रीका, अरब व चीन आदि देशों में रेगिस्तान हैं तो हमारे देश के पश्चिम में थार का बड़ा रेगिस्तान है। यह पंजाब के फिरोजपुर से लेकर राजस्थान के बीकानेर, गंगानगर, हनुमानगढ़, चुरू, सीकर, नागौर, जोधपुर, जैसलमेर, बाड़मेर होता हुआ पाकिस्तान के कराची तक फैला हुआ है।

रेगिस्तान क्यों बनते हैं? माना यह जाता है कि जहां आज रेगिस्तान है, वहां कभी न कभी समुद्र रहा है, जो या तो सूख गया या फिर पीछे हट गया है। यही कारण है कि रेगिस्तान के गर्भ में तेल, गैस, कोयला या फिर अन्य प्राकृतिक पदार्थों का अथाह भण्डार छुपा हुआ है।

राजस्थान की राजधानी जयपुर से उत्तर दिशा में जाएं, तो सीकर रेगिस्तान का प्रवेश द्वार है, जहां से आगे पाकिस्तान सीमा तक रेत के ऊंचे पहाड़-से टीले हैं। बीच-बीच में हर चार-पांच किलोमीटर की दूरी पर गांव बसे हुए हैं। ज्यों-ज्यों रेगिस्तान अपना विशाल स्वरूप दिखाता है, त्यों-त्यों गांवों के बीच की यह दूरी बढ़ती जाती है। आगे चलने पर बीकानेर, जैसलमेर और बाड़मेर के सीमावर्ती इलाकों में तो दो गांवों के बीच का फासला बीस-तीस किलोमीटर भी होता है। आबादी बहुत कम होती है। गांव नाम-मात्र को होते हैं– केवल घास-फूस की कच्ची झोपड़ियां। वह भी अपने लोगों के अपने पशुधन के साथ-साथ चलते-फिरते रहने के कारण कभी उदास बंद

पड़ी रहती हैं और कभी फिर आबाद हो जाती हैं।

रेगिस्तान का नाम सुनते या पढ़ते ही कई बातें एक साथ उभरती हैं- जैसे, प्रचण्ड गर्मी, धूल-भरी आधियां, पानी का त्राहिमाम अभाव, भूख और गरीबी से लिपटी निरक्षर व नीरस जिन्दगी। यह सब कुछ कहीं आधा तो कहीं आधे से कम सच है। यहां गर्मी में पश्चिमी तपती हवाओं के साथ लू के थपेड़े धूल उड़ाते हुए जब अपने तेज वेग से इधर होकर गुजरते हैं तो यों समझिए, पशु-पक्षी से लेकर सारा जीव-जगत अपने-आपको छुपा लेने के लिए कोई जगह नहीं पा सकता– न मकान के अन्दर, न मकान के बाहर, कहीं भी नहीं। हर कोई इस तरह सोचता है- इससे तो अच्छा है कि सर्दी आ जाए जल्दी। और जब सर्दी आ जाती है तो उत्तरी हवाओं के साथ हिमालय से चलकर शीत लहर यहां तक आती है और लोगों के दांत बज उठते हैं। तो लोग फिर सोचते हैं– इससे तो हमारी गर्मी भली थी। दोनों के बीच में आती है बरखा रिमझिम करती और मौसम सम हो जाता है– न गर्मी, न सर्दी। टीलों पर ककड़ी, तरबूजों और खरबूजों की बेलें पसरती हैं– फूलों और फलों से आच्छादित। तब यहां मोर नाचते हैं। दूर-दूर तक सुनाई देती है आवाज, पीहू-पीहू की। तब पिया याद आते हैं, जब खेतों में होती हैं कामिनियां। आते हैं बादल उमड़-घुमड़कर, दूर देश से गर्जते-बरसते। तब टीलों पर से पानी बहकर समतल पर आता है। लेकिन अब कुछ सालों से लगातार बरसात का अभाव रहता है और अकाल रहता है। जैसे खुद व्यक्ति, समाज और राजनीति अपने पुराने नियम और परम्पराएं छोड़ रहे हैं, नये नियम अभी बन नहीं पा रहे हैं– लगता है, प्रकृति में भी वैसा ही कुछ घटित हो रहा है। विद्वानों का मत है कि राजनीति में परिवर्तन हर सौ-पचास साल बाद आते रहते हैं, लेकिन प्रकृति अपने नियमों पर बीस तीस-हजार साल कायम रहती है। उसके बाद उसमें बदलाव के स्पष्ट संकेत मिलने लगते हैं।

जैसलमेर और बाड़मेर में पानी का भारी अभाव रहा है। घी-दूध मिल जाएगा, पर पानी आसानी से नहीं मिलेगा। पिछले साल अचानक इसके उलट हुआ। रेत के टीलों के बीच जहां दस-दस साल के

बच्चों ने यह नहीं जाना था कि पानी आकाश से भी गिर सकता है बूंद बनकर, और बादल क्या होते हैं, एक रात ऐसी आई कि पानी आसमान से कहर बनकर गिरा। ढाणी और गांव सोए के सोए रह गए। देखते ही देखते ऊंचे पहाड़ से टीलों के बीच रास्ता बनाती हुई आई एक नदिया। 26 किलोमीटर लम्बी झील बन गई रेत के महासागर के बीच।

और भूख और गरीबी? यहां देश के बाकी हिस्सों-सा काम नहीं है। यहां आबादी का घनत्व शेष भारत से कम है। तपती लू में पैदा होकर पानी के अभाव में संघर्ष करते हुए बड़े होने के कारण यहां के पेड़-पौधे कांटेदार हैं, लोग कठोर व मेहनती हैं और स्वभाव से जिद्दी भी।

किसान कभी सोचने-विचारने के लिए समय नहीं निकाल पाता। यह रात और दिन अपने को खपाता रहता है, यह सोचते हुए कि इस साल नहीं तो अगले साल देगा भगवान उसको उसकी मेहनत का फल।

सेठों का इलाका

आपको यह जानकर शायद आश्चर्य होगा कि भारत के ज्यादातर धनपति– बिड़ला, डालमिया, सिंघानिया, गोयनका, मोदी, मुरारका, बजाज, पोद्दार, बांगड़, सोमानी, मित्तल, आदि सारे के सारे इन घोरों की उपज हैं। दो-ढाई सौ साल पहले से ही सेठों का अपना एक वैभव रहा। आज इसे इस इलाके के सीकर, फतेपुर, चुरू, बिसाऊ, लक्ष्मणगढ़, नवलगढ़, बगढ़, पिलानी, रामगढ़, आदि कस्बों में सेठों की खाली व सूनी पड़ी हवेलियों को देखकर जाना जा सकता है। इन हवेलियों की दीवारों पर बहुत सुन्दर कारीगरी, चित्रकला, आदि के नमूने हैं। सवाल उठता है कि इस रेगिस्तान में इतनी धन-सम्पदा व व्यापार की यह कला कहां से आई, जो कालांतर में असम, बंगाल से लेकर शेष भारत के बहुत बड़े हिस्से पर छा गई? यह एक अलग शोध का विषय हो सकता है। संभवतः कभी यह इलाका एक मार्ग रहा

है मध्य एशिया, अफगानिस्तान से लेकर चीन तक के आपसी व्यापार का। इसी मार्ग ने बीच के एजेन्ट पैदा किए, जो चीन और मध्य एशिया के व्यापार को आपस में जोड़ते थे। यह इलाका सोने की चिड़िया की चोंच नहीं तो एक पंख जरूर था अतीत में, जहां से कुछ लोगों ने व्यापार करना सीखा।

जैसलमेर में एक हवेली है। यह पटवों की हवेली के नाम से जानी जाती है। यह हवेली दुनिया की प्रसिद्ध दो-चार हवेलियों में से एक है। यह पीले पत्थर से बनी है। पत्थरों पर छेनियों और हथौड़ों से जो नक्काशी, बेलबूटे, फूल आदि बनाए गए हैं उनको देखकर आश्चर्य होता है कि इसके बनाने में कितनी मेहनत व कितना श्रम लगा होगा! कहां से आया होगा इतना पैसा! इस हवेली के एक हिस्से में अब भी उसका एक कंगाल मालिक रहता है। बाकी हवेली सूनी पड़ी है। अन्दर जाते वक्त भय उत्पन्न होता है कि वापस बाहर निकलने का रास्ता मिल पाएगा या नहीं। खाली पड़ी भूतही हवेली के वक्त के साथ कंगाल हुए मालिक ने, जो उसके बाहर दालान में टूटी खाट पर बैठा था, इस हवेली के मालिकों के वैभव व धन-सम्पदा के बारे में बताया कि सिर्फ एक ही हवेली नहीं थी उस जमाने में इसके मालिक के पास। जैसलमेर के मकानों का एक-तिहाई हिस्सा उसी द्वारा निर्मित था। उसका धन्धा था चीन को अफीम सप्लाई करना और कोटा, उज्जैन, मालवा, आदि में अफीम की खेती के लिए प्रोत्साहन देना। इसमें शायद अफगानिस्तान तक का इलाका शामिल था। तो इतनी दूर-दूर तक फैले व जुड़े थे साम्राज्यवादी संसार की नीतियों के असर व तार। चीन को अफीम पिलाकर गुलाम बनाने के लिए खेती भारत, अफगानिस्तान, आदि में होती थी। गौर करने लायक बात यह है कि आजकल राजस्थान में भी लोगों को शराब खूब पिला रही है सरकार। पानी का इन्तजाम नहीं है, पर शहरों ही नहीं, छोटे-छोटे गांवों में भी शराब व बीयर की दुकानें मौजूद हैं। जो जितना भूखा व गरीब है, वह उतना ही नशे का ज्यादा आदी होता जा रहा है ताकि अपने घर-परिवार, बाल-बच्चों की बदहाली भूल सके। बेरोजगारी व परिवार की आर्थिक

असुरक्षा का भय नौजवानों को नशे का आदी ही नहीं बना रहा है, वे अनिद्रा व पागलपन के शिकार भी हो रहे हैं। आजकल लोग सुबह-शाम नहीं देखते, भरी दोपहरी में नशे में धुत्त रहने लगे हैं।

हां, इस इलाके के प्रमुख कस्बों में सेठों की हवेलियां आज खाली पड़ी हैं। ये सेठ यहां से क्यों व कहां चले गए? हिन्दुस्तान के अलग-अलग इलाकों में अंग्रेजों का शासन अलग-अलग तरीकों से काम कर रहा था। उनका जैसा सीधा शासन असम व बंगाल पर था वैसा राजपूताना में नहीं। शासन की तीन स्पष्ट पर्तें थीं : (1) देश पर साम्राज्यवादी शासन, (2) राजपूताना जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, आदि में राजाओं की रियासत और (3) अलग-अलग छोटे-छोटे पांच-दस गांवों की जनता पर सामन्तों का शासन। आखिरी दिनों में अर्थात दुनिया के पैमाने पर एक व्यवस्था-परिवर्तन के दौर में इधर के सामन्तों ने विद्रोह करके राजाओं के शासन को मानने से इन्कार कर दिया। अंग्रेजों का इधर कोई आधार नहीं था, अत: सीधे सामन्तों का शासन हो गया। सामन्त हर गांव में एक-एक किसान को, जिसके पांच-सात लठैत बेटे थे, गांव का मुखिया नियुक्त कर (और इस तरह उसे शासन में हिस्सेदार बनाकर) शासन चलाने लगे।

सामन्तों के विद्रोह के कारण ही इधर सेठ अपने-आपको असुरक्षित महसूस करने लगे। व्यापार करना मुश्किल हो गया। राहों में डाकेजनी बढ़ गई। इलाके में सेठों की रक्षा का दायित्व पहले सामन्तों के पास था, जिसके बदले सेठ राहदारी-कर देते थे। यह पैसा राजा व अंग्रेजों के पास नहीं पहुंच रहा था। सेठों का बकाया वसूल करवाकर देना भी सामन्तों का ही दायित्व था। उसके बदले में भी सेठों को कुछ देना पड़ता था। 1818 में राजपूताना के राजाओं और अंग्रेजों के बीच 'संरक्षण सहयोग संधि' हुई। अब राजपूताना के शासक अंग्रेजों के अधीन काम करने लगे। तब सामन्तों पर लगाम कसने के लिए एक कानून बना दिया कि अगर सेठ की वसूली न हो पाए तो वह न्यायालय (जो बना दिए गए) में डिक्री कर सकेगा। तब सेठों ने न्यायालयों, राजाओं और अंग्रेजों के भरोसे पर सामन्तों को राहदारी व अन्य कर देना बन्द

कर दिया। तब सामन्तों ने अपना दायित्व ढीला छोड़ दिया। कम्पनी सरकार व राजा कानून के बल पर सेठों की रक्षा न कर सके। सेठ इलाका छोड़कर असम-बंगाल की तरफ कूच कर गए, जहां कम्पनी सरकार का बेहतर आधार था। यह पलायन सेठों और कंपनी सरकार दोनों के लिए फायदे का सौदा रहा। अंग्रेज सेठों को सीधा अपना व्यापारिक एजेन्ट बनाकर देश के विभिन्न हिस्सों में व्यापार करने लगे। असम और बंगाल के इलाकों में व्यापार के नाम पर इन लोगों ने खूब शोषण किया और इस रेगिस्तान में असम व बंगाल से समृद्धि आई, जैसे आजकल खाड़ी देशों से हमारे देश में आ रही है। अंग्रेज और इधर के सेठ दोनों ही व्यापारी थे। दोनों के संबंध बड़े विश्वसनीय रहे। उस दौर में भी और स्वतंत्रता संग्राम के दौर में भी दोनों की साझी समझदारी से ही लड़ा गया भारत का स्वतंत्रता संग्राम।

खैर। उस दौर में जब कुछ सेठ बंगाल व असम की तरफ चले गए, बाकी बचे सेठों ने व्यापार के जरिए भगवान और धर्म के नाम पर किसानों का खूब शोषण किया। उन्होंने नारा दिया– 'मानवसेवा ही प्रभु पूजा है। अहिंसा परमो धर्मः। जीयो और जीने दो।' आज भी इजारेदारियां इसी सिद्धान्त पर धन बटोरने में लगी हुई हैं कि अगर हमारे पास धन व पैसा होगा तो हम गरीब लोगों की गरीबी हटाने में उसका प्रयोग कर सकेंगे। सामन्त जोर-जुल्म के सहारे शोषण करते थे, सेठ यह काम गाय, मन्दिर, पानी की प्याऊ, शांति, भजन-कीर्तन, दया-दान, धर्म और भगवान की आड़ में आज तक जारी रखे हुए हैं।

इतिहास की एक झलक

1526 में दिल्ली का शासक इब्राहिम लोदी था। इधर राजस्थान (उस समय राजपूताना) में महाराणा प्रताप के पूर्वज राणा सांगा चितौड़ के महाराजा थे।

1526 में महाराणा सांगा ने बाबर को न्यौता देकर बुलाया कि "तुम भारत आओ और दिल्ली पर हमला करो। उसी समय मैं आगरा पर धावा बोल दूंगा और हमारा शासन हो जाएगा।" उस समय राणा

सांगा की मंशा यह थी कि जब बाबर लोदी को हरा देगा, तो फिर थके हुए बाबर को मैं (राणा सांगा) मार भगाऊंगा और दिल्ली पर कब्जा हो जाएगा।

पानीपत के मैदान में लोदी और बाबर के बीच युद्ध हुआ। बाबर की जीत हुई और वह दिल्ली का शासक बन गया। जब बाबर ने राणा सांगा की ओर नजर उठाकर देखा तो वह युद्ध की तैयारी करते पाया गया। दोनों के बीच खानवा के मैदान में युद्ध हुआ, जो ढाई घण्टे चला। राणा सांगा हार गया। सांगा ने कसम खाई कि बाबर को हराए बिना चितौड़ वापस नहीं जाएगा। सांगा युद्ध में घावों के कारण परलोक सिधार गया। उसके बेटे, पोते (राणा प्रताप) चितौड़ तो न गए, पर चितौड़ से आगे उदयपुर चले गए। राणा सांगा की फौजों के हारे हुए सिपाही आज भी उस कसम को कायम रखते हुए गाड़िया लुहारों के रूप में गांव-गांव की ठोकरें खाते घूमते-फिरते देखे जा सकते हैं। खैर, यह तो अतीत और इतिहास की बात है। अतीत ने हमारे वर्तमान को बनाया है और वर्तमान के आधार पर हमारा भविष्य बनेगा। हमें समय-समय पर अपने इतिहास को याद कर समझते रहना चाहिए, ताकि हम भविष्य के घातों का शिकार न हों। जो कौम अपना इतिहास और लड़ना भूल जाती है, उसका पतन तय है।

रेगिस्तान में एक यात्रा

अब हम राजस्थान के रेगिस्तान के भूगोल पर उतरें। पूरा राजस्थान रेगिस्तान नहीं है। अरावली पहाड़ राजस्थान के बीचोंबीच से गुजरता हुआ इसे दो भागों में बांटता है। रेगिस्तानी भाग अरावली के उत्तर में है।

अब सीधे हम थार की गहराई में चलें। 1965 में भारत-पाकिस्तान के बीच एक घमासान युद्ध हुआ था। यह कश्मीर से शुरू होकर पंजाब और राजस्थान में रेगिस्तान के सीने पर लड़ा गया। उस समय मैं जैसलमेर की सीमावर्ती चौकी पोचाना पर राजस्थान आर्म्ड फोर्सेस के साथ तैनात था और घर छुट्टी पर आया हुआ था। युद्ध शुरू होते ही

मुझे संदेश मिला– जल्दी ड्यूटी पर पहुंचो। घर से मैं जैसलमेर हेड क्वार्टर पहुंचा। मुझे आदेश मिला कि आप यहां से बस के द्वारा सम (जैसलमेर की एक तहसील) पहुंच जाओ। वहां से आपको ऊंट सवार

आकर चौकी तक ले जाएंगे। मैं बस में बैठकर सम पहुंचा। रास्ते में कोई एक-दो गांव आए होंगे। जमीन बिल्कुल पथरीली थी। सम व जैसलमेर के बीच एक सूखा खाला आया, जहां वृक्षों की हरियाली भरपूर थी। इस हरियाली का कारण बताया गया कि कभी इधर से एक नदी बहा करती थी। सरस्वती नाम था उसका, जो आज सूख गई है। हमारी बस जैसलमेर से चलकर लगभग तीस-चालीस किलोमीटर दूर सम में सूर्यास्त से थोड़े पहले जाकर रुकी। मैंने देखा– एक सपाट मैदान के उस पार विशाल पहाड़ जैसे टीले पर सूर्य यों बैठे मुस्कुरा रहे थे, जैसे अब उधर रात की गोद में छलांग लगाने ही वाले हों। एक नीरव शांति– न कोई जीव, न कोई जन्तु; सिवाय उन चार-पांच लोगों के जो अभी-अभी बस से उतरकर दूर मैदान में जाते नजर आ रहे थे। इसके अलावा दो पक्के मकान, जो सरकारी थे। एक लावारिश कमरा, जिसकी खिड़कियों व दरवाजों पर किवाड़ नहीं थे। उनमें कोई आदमी होने के चिन्ह नजर नहीं आ रहे थे। मैं अकेला खड़ा सोच रहा था कि अब क्या करूं, कहां जाऊं। एक रील-सी घूम रही थी जल्दी-जल्दी मेरे मन में। एक के बाद एक विचार आ रहे थे। मुझे अपना घर-परिवार याद आया। यहां दूर कहीं दूर मैं क्यों खड़ा हूं, कहां जा रहा हूं! देश सेवा-करने? चलो, मेरे देश के समझदार व सभ्य लोगो, ऐसा ही सही। कोई एतराज नहीं। पर मुझे उन लोगों पर तो एतराज करने का हक है जो प्रभु-पूजा कर मानव-सेवा कर लेते हैं। पहले लोगों के हिस्से का माल अपने पक्ष में करके नंगे करना, फिर वस्त्रदान कर पुण्य कमाना। पहले हाथ से रोटी छीन लेना और फिर निवाला-निवाला दान देकर धर्म कर लेना।

नजर उठा के देखता हूं। एक भवन पर बोर्ड चिपका है– पुलिस थाना सम। सम शहर के अन्दर जाता हूं। एक सिपाही मिलता है। बताता हूं कि मुझे सीमावर्ती चौकी पोचीना जाना है। वह उस लावारिश मकान की तरफ इशारा करके बताता है कि उधर सामने चले जाओ, वहां आते हैं बॉर्डर एरिया से ऊंट सवार अपने लोगों को लेने के लिए। मैं वहां चला जाता हूं। ईंटों से बना एक सूना, राख से भरा चूल्हा पड़ा

है। एक-दो खाली माचिस के डिब्बे, बीड़ी के बंडल के ऊपर का कागज, कुछ लकड़ियां चूल्हे के पास हैं, बस। अब मैं फिर सोचता हूं– रात कहां व कैसे गुजारी जाएगी। यद्यपि थाना पास में था, मैं भी आर्म्ड फोर्स में था; लेकिन मालूम नहीं क्यों, उस समय लगा और आज भी लगता है कि पुलिस आदमी की कोई सहायता नहीं कर सकती है।

मैं एक पत्थर पर बैठ जाता हूं। अंधियारा गहराता जा रहा है और आंधी आंखों में धूल झोंक रही है। साथ है सन्नाटे को चीरती हुई एक सांय-सांय की आवाज। थोड़ी देर बाद अंधेरे को चीरते हुए तीन-चार लोग आए, जो मेरी ही चौकी पर तैनात लोग थे। वे भी छुट्टी काटकर घर से आए थे। अब सारा बोझ व चिन्ता हल्की हो गई। सब के पास अपना-अपना खाना था, जिसे सब घर से लेकर चले थे। सबने खाया, पानी थाने से ले आए। सो गए। सुबह चार-चार अंगुल रेत हर आदमी के बिस्तर पर थी। यहां लगातार बिना रुके पांच-छह महिने तूफानी आंधियां चलती हैं। बाकी इलाकों में लोग जितना नमक नहीं खाते, इधर उतनी तो रोज रेत खा जाते हैं।

सुबह तक कोई ऊंट लेकर नहीं आया। हम चार आदमी पैदल ही रवाना होते हैं। उन तीन के पास पानी की केतली थी भरी हुई। सपाट मैदान को करीब एक किलोमीटर पार करने के बाद पत्थरों से बनी एक प्राकृतिक दीवार आई सामने– करीब पांच से दस फीट ऊंची। उस पर चढ़ने के बाद सबसे पहले सैकड़ों झोपड़ियां खड़ी दिखीं एक ही जगह सिर जोड़े, जिनकी खिड़कियां बन्द थीं। कोई आदमी न था वहां। यह सम गांव था। पर कहां गए इनके बाशिन्दे, हम में से किसी को भी कुछ पता न था। उनकी भेड़-बकरियां, ऊंट और गायें रेगिस्तान में कहां होंगे? वहां जहां इस समय चरने को घास हो। यहां के लोगों का मुख्य पेशा पशु-पालन है। खेती वहां नहीं होती, क्योंकि बरसात तो यहां मामूली होती है।

मुख्य रूप से दो प्रकार के टीले थे– एक तो पहाड़-सी ऊंचाई

लिए, और दूसरे जमीन के ऊपर थोड़ा उभार लिए हुए गहरे खड्डे से होते हैं– एक के बाद एक असंख्य, दस-पन्द्रह फीट गहरे, जिनकी गोलाई का व्यास चालीस-पचास फीट होता है। इनकी रेत बहुत बारीक, मुलायम और स्वच्छ होती है। गन्दगी, घास-फूस का एक तिनका भी न तो ये अपने ऊपर उगने देते हैं और न ठहरने देते हैं।

इनके ऊपर से आदमी तो क्या, जानवर भी पार नहीं जा सकते। पैर रखते ही अंदर धंस जाते हैं। इन्हें हिलाकर निकालने की ज्यों-ज्यों कोशिश की जाती है और गहराई में धंसते जाते हैं। इनकी लंबाई-चौड़ाई मीलों-मील होती है। हमारे सामने ऐसा ही एक टीला था। हमें इसका चक्कर लगाकर उस पार जाना था। हम सुबह चले थे दिन में। एक-दो बज गए लगातार चलते-चलते। रास्ते में न तो कोई गांव आया, न कोई आदमी मिला, न किसी पशु-पक्षी के दर्शन हुए। चारेक बजे एक टीले पर एक बुढ़िया और दसेक बरस की एक लड़की बैठी मिली, जिन्होंने चार-पांच बीघे खेत में बाजरे या कुछ दूसरी फसल बो रखी थी। इससे पहले खेती का कोई चिन्ह न देखा। हम उन दोनों के पास जाकर ज्यों ही खड़े हुए, दोनों भयभीत हो उठीं। लड़की की आंखों में भय व दहशत साफ झलक रही थी। वह मां की गोद में दुबकने की नाकाम कोशिश कर रही थी। बात मेरी समझ में आ रही थी। मैंने साथियों से कहा, "हमें यहां ज्यादा देर नहीं रुकना चाहिए, क्योंकि ये भयभीत हैं।" हम वहां से रवाना हो गए। चलते-चलते सूर्यास्त का समय आ गया, पर कोई गांव या आदमी नहीं आया सामने। रात आने वाली थी। अब हमारी केतलियों में पानी भी न था। भूख भी सताने लगी थी। मैंने निर्जन वन की ऐसी कहानियां पढ़ रखी थीं कि एक बार रेगिस्तान में दो यात्री भटक गए, तो इधर से उधर भागते-दौड़ते आखिर में पानी के अभाव में चल बसे। मुझे कुछ ऐसी ही कहानी याद आने लगी थी ख्यालों में। अचानक हमारे सामने राह में एक कुंआं आया, जिसके आस-पास जमीन पर ताजा पानी के बिखरे होने के चिन्ह मौजूद थे, जानवरों और आदमियों के पद-चिन्ह भी थे, पर कुंएं पर पानी का कोई साधन न था। हमारी आस जागी कि कहीं आस-पास कोई बस्ती

है। हम इन पशुओं और आदमियों के पद-चिन्हों का पीछा करते-करते वहां पहुंच जाएंगे।

अंधियारा बढ़ता जा रहा था। थोड़ी दूर चलने पर एक ऊंचे टीले की तलहटी में चार-पांच झोपड़े मिले। चारों तरफ रेत की दीवार बनी थी ऊंची-ऊंची। हमने जब अंदर प्रवेश किया तो देखा– एक 6.5 फीट लंबा-तगड़ा मुसलमान जवान, दो नौजवान लड़कियां, जो शायद उसकी पत्नियां थीं। वे एक बार के बाद नजर नहीं आईं। जवान ने हमारा स्वागत किया। झोपड़ा बहुत बड़ा था, कलात्मक रूप से बना हुआ था। अंदर लगभग पांच-सात बड़े-बड़े पलंग बिछे हुए थे। लगता था, जैसे जवान साधन-सम्पन्न है। उस समय तो मुझे कोई जानकारी नहीं थी, लेकिन अब सोचता हूं कि सीमावर्ती इलाकों में ऐसे ही लोग करते हैं तस्करी। उस समय सीमा के आर-पार जाना बड़ा आसान काम था। कोई कंटीले तारों की बाड़ नहीं थी। पशुधन भारत का पाकिस्तान में, पाकिस्तान का भारत में आसानी से आता-जाता रहता था। दो चौकियों के बीच की दूरी पांच-दस किलोमीटर की रहती थी। बीच से ऊंट क्या, चाहे हाथी के हाथी निकल जाएं आसानी से। मैंने देखा तो नहीं, पर सुना है कि यहां के लोग रोटी तो दिन में एक बार ही बनाते-खाते हैं, बाकी भेड़ों, गायों व ऊंटनियों का दूध व छाछ पीकर काम चला लेते हैं। हर परिवार के पास कुछ न कुछ मात्रा में सोना मिल ही जाता है– बहुत परिवारों में तो किलो के हिसाब से। इनका खर्चा बहुत कम और पशुधन की आमदनी खूब रही है। इधर यह कहते सुना गया कि दुनिया में कोई ऐसा भी इलाका है क्या, जहां पशु व आदमी आएं और अपने-आप पानी पीकर चले जाएं?

खैर, हम चारपाइयों पर आराम करने लगे। नौजवान ने हमसे कोई बात नहीं की, न हमने कोई बयान लेने की जरूरत समझी। जब खाना बन गया तो चार बड़े-बड़े कौसी के अफगान कटोरों में एक-एक पाव घी, दो-दो बाजरे की रोटियां लगाकर रख दी गईं सामने। साथ वालों ने बताया कि एक रोटी घी में चूर के खा लो, दूसरी रोटी के लिए दूध आएगा। वैसा ही किया। रात को सो गए, सुबह उठकर रवाना हो

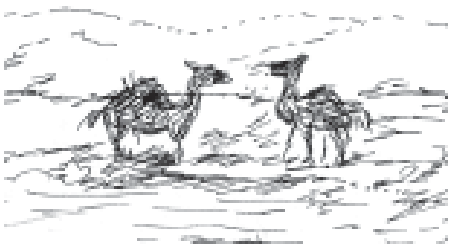

गए। उस समय इधर और हमारे इलाके में भी घरों में चाय बनाकर पीने का कोई रिवाज नहीं था। कोई असम में रहने वाला आदमी चाय लेकर गांव में आता, बनाने की विधि बताता और कहता– "यह सर्दी-जुकाम में काम करती है।"

वहां से चलकर हम ऊंचे टीलों पर चढ़ते-उतरते आगे बढ़े। वहां कोई स्पष्ट रास्ता नहीं बन पाता है, क्योंकि किसी एक निश्चित स्थान से किसी दूसरे निश्चित स्थान तक जाने वालों की ऐसी न तो संख्या है और न कोई जरूरत जो चलते-चलते रास्ता बना लें। करीब नौ-एक बजे दिन में हम 'कूचड़ी' नाम के एक गांव में पहुंचे। वहां बीस-तीस घर थे दलितों के। मर्द दो-एक ही थे। औरतें घरों में जरूर नजर आ रही थीं। पानी तो हमने उस नौजवान के घर से भर लिया था अपनी केतलियों में। अब हमें भूख लगी थी, सो हम खाने की तलाश में थे। गांव में रोटी बहुत कम थी, क्योंकि अनाज यहां मुश्किल से पहुंचता था। लोग बहुत किफायत से अन्न का उपयोग कर रहे थे, डरते-डरते। दिन भर में एक रोटी और बाकी छाछ, दूध-दही। हमने रोटी के लिए कोशिश की। एक-एक घर के दरवाजे पर जाकर पूछा– रोटी है? तो औरतें, मालूम नहीं शर्म से या फिर डर से, जवाब देने की बजाय घर में घुस जाना ठीक समझ रही थीं।

हम वहां से आगे रवाना हो गए। टीले पर चढ़ते तो रेगिस्तान का विस्तार हमें उत्साह देता व विचारों को उड़ान। ज्यों ही टीले से नीचे उतरते दुनिया सिमटकर हमारे पैरों में आ जाती। शायद हर आदमी सीमित दायरे को नहीं, ऊंचाइयों और विस्तार को ही पसन्द करता है। आदमी का लोकेशन जितनी ऊंचाई पर होगा, उसके विचार भी उतने ही ऊंचे और विस्तृत होंगे। आप अगर खड्डे में बैठकर सोचेंगे तो विचार भी शरीर और अन्तरात्मा में सिमटकर रह जाएंगे।

चलते-चलते दिन के दो बजे के लगभग हमारे सामने अब तक का सबसे विशाल और ऊंचा पहाड़-सा एक टीला आया। इसकी चढ़ाई लगभग एक किलोमीटर होगी तिरछी-तिरछी। हम ज्यों ही इस टीले पर पहुंचे तो सामने का दृश्य देखकर आंखें विस्मय से फैल गईं– क्या यह सच है या फिर कोई सपना, जो रात को नींद में तो नहीं देखा जा रहा है? कैसे संभव है इस स्थान पर, जो सामने दिखाई दे रहा है, वह सब कुछ?

चारों तरफ ऊंचे-ऊंचे टीलों से घिरा एक गोलाकार मैदान, जो हरियल घास से लबालब भरा है, जैसे सारे रेगिस्तान का जीवन यहां आ गया हो। जगह-जगह दिखाई दे रहे थे सूरज की तिरछी पड़ती सुनहरी किरणों के नीचे चरते गायों के झुण्ड, बकरियों, भेड़ों, ऊंटों, आदि के टोल के टोल और बीच-बीच में रंग-बिरंगी पोशाक पहने डोलते मर्द और औरतें। मैदान के ठीक बीच में पानी की एक छोटी झील थी। इसके किनारों पर बैठे थे सफेद छोटे बगुले। मैं सोचता ही रह गया कि दो दिन लगातार जो भू-दृश्य देखता आया हूं, इसके गर्भ में यह कैसा अचम्भा है! प्रकृति के अपने अनोखे रूप व स्वरूप हैं। इनको इन्सान जब पहली बार देखता है तो आश्चर्यचकित होने के अलावा और हो भी क्या सकता है! इच्छा हुई कि यहीं बैठा रहूं, आगे न जाऊं।

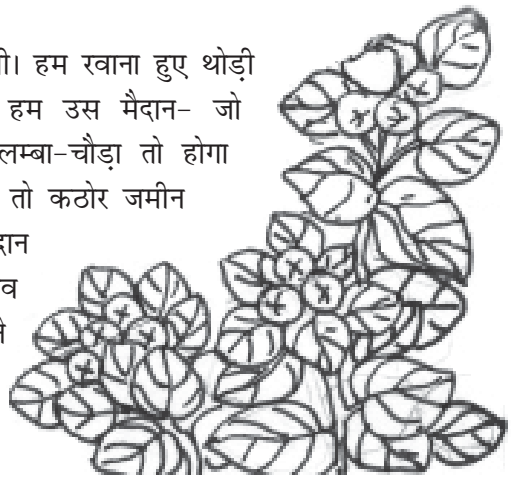

लेकिन मजबूरी थी। हम रवाना हुए थोड़ी देर सुस्ताने के बाद। हम उस मैदान- जो तीन-चार किलोमीटर लम्बा-चौड़ा तो होगा ही– को पार कर गए तो कठोर जमीन का एक सूखा सपाट मैदान आया। इसमें असंख्य जीव जमीन खोदकर अपने बिल बना रखे थे। वे आराम से बिलों के

बाहर अपना मुंह निकाले बैठे थे, जैसे हमारा ही इन्तजार कर रहे हों। हम जिधर से गुजरते, वे हमें देखते ही अपने बिलों में जा छिपते। ये सांडा नाम के जन्तु थे, जिनसे बना तेल नामर्दगी को खत्म करने के नाम पर बाजारों में बिकता है। यहां शायद जमीन में नमी थी, इसीलिए जीव थे इस मैदान में। इसके बाद फिर टीलों को पार करते-करते सूर्यास्त का समय हो गया। सामने किसी बस्ती के होने की संभावना न थी। एक आशंका और थी। आज रात अगर सामने चलते ही गए तो कहीं ऐसा न हो कि बोर्डर पार कर पाकिस्तान में जा घुसें। सांझ घिर आयी थी। दो टीलों की घाटी के बीच गायों का एक झुण्ड मिला सामने से आता हुआ। यह इस बात का संकेत था कि आगे कोई बस्ती है। दूर कहीं दूर से एक गधे के बोलने की आवाज सुनाई दी। यह इस बात का सूचक थी कि आगे और बस्ती है। हम ज्यों ही एक विशाल टीले की चोटी पर चढ़े तो फिर आश्चर्य! इस इलाके में टीले की तलहटी में एक अन्य सुन्दर छोटा-सा नगर बसा हुआ था, जो बिजली की रंग-बिरंगी रोशनियों में नहाया था। शानदार रेशमी तम्बुओं के मकान, बीचों-बीच रास्ते में मोटी-मोटी चटाइयां बिछी हुईं। यह क्यों व कैसे था यहां? यहां के बाशिन्दे लम्बे, पूरे छह फीट के भूरे जवान थे जो देखने में यूरोपियन लग रहे थे। पता चला कि ये कोई फ्रांसीसी कम्पनी के लोग हैं, जो ओ.एन.जी.सी. के साथ मिलकर इस इलाके में तेल-गैस आदि की खोज करने में लगे हुए हैं। हम उनके बराबर से आगे निकल गए। अब धुंधलका हो चला था। क्या करें अब?

हमें दूर, कहीं दूर, हमारे आगे किसी एक टीले पर एक ऊंची गुमटी-सी बनी दिखाई दे रही थी, जो इन सीमावर्ती चौकियों पर ओ.पी.के. लिए बनाई जाती हैं, जहां खड़ा होकर संतरी चारों तरफ

चौकस निगाहें डालते हुए रक्षा का दायित्व निभाता है। हमारे एक साथी ने थैले से टॉर्च निकाली और ऊंचे आसमान में रोशनी फेंकी। आकाश में रोशनी का एक स्तम्भ खड़ा हो गया। तत्काल सामने से इसका जवाब आया कि इधर आ जाओ। अब हमारे सामने एक और आशंका थी कि हो सकता है, यह पोस्ट पाकिस्तान का हो। हमने सोचा– चलो, नजदीक चलने पर ही पहचान पाएंगे कि हम कहां हैं। हम टीले से नीचे उतरे और आसमान फिर छोटा-सा हो गया। थोड़ी ही देर बाद पूर्व से भूरी रेत पर अपनी सुनहरी किरणें बिखेरने को चांद उतरा और सब कुछ शांत भूरे चमकीले रूप में बदलने लगा। थोड़ी दूर चलने पर ज्यों ही रेत ठण्डी हुई, सांपों का साम्राज्य आया। रेत पर असंख्य सांप। कई आराम फरमा रहे थे तो कई आपस में कलोल करते हुए गुत्थम-गुत्था हो रहे थे। इस दृश्य को देखकर मैं कांप गया और अचानक ठिठककर रुक गया। हमारे साथ वालों में से एक साथी इनका स्वभाव जानता था। वह बोला-"डरो मत, आ जाओ। इन्हें भी अपनी जान खूब प्यारी है। हमारे पैरों की आहट पाकर वे भाग जाएंगे इधर-उधर अपना जी बचाने के लिए।" और घुस गए हम मौत के इन सौदागरों के बीच। वैसा ही हुआ, जैसा उस साथी ने कहा था। सांप अपने-आप इधर-उधर भागकर हमें रास्ता दे रहे थे। यह स्थिति कोई एक किलोमीटर तक रही। फिर शांत इलाका आ गया। एक छोटी-सी पहाड़ी भी खड़ी थी यहां अपवादस्वरूप। हमने फिर आकाश में प्रकाश फेंका टॉर्च से। सामने से जवाब लेते-देते हम पोचीना गांव के नजदीक चले गए, और चुपचाप एक साथी को रैकी (खोज) करने भेजा कि पता लगाओ, क्या यह वहीं गांव व पोस्ट है जहां हमें पहुंचना है। वह गांव के नजदीक गया। देखा, घरों को पहचाना और आश्वस्त होकर वापस आया। बोला– "आ जाओ, हमारा ही पोस्ट है।"

भारत-पाक सीमा

जब आप हमारे साथ यहां तक आ ही गए ठीक सीमा पर तो फिर आगे और क्या हुआ वह भी सुन लीजिए। युद्ध शुरू हो चुका था भारत-पाकिस्तान के बीच, अगस्त-सितम्बर 1965 में। सवाल उठता है, यह युद्ध क्यों हुआ था? हमारे देश में सांप्रदायिक दंगों और भारत-पाकिस्तान के बीच युद्धों की नींव स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान ही रखने लगे थे साम्राज्यवादी। ठीक स्वतंत्रता देते ही रख दी थी दोनों देशों के बीच युद्धों की नींव। ध्यान रहे, अंग्रेजों ने एक भारत को नहीं किया था आजाद, बल्कि देश में छोटी-छोटी सैकड़ों रियासतों को दी थी यह आजादी। वे जहां जाना चाहें जाएं, स्वतंत्र हैं। भारत में जाएं, पाकिस्तान में जाएं, और चाहें तो स्वतंत्र भी रह सकती हैं दोनों के बीच में। इस सब कुछ के पीछे उनकी मंशा यह थी कि जब कभी जरूरत पड़े दोबारा दुनिया के पैमाने पर शासन करने की तो यह आपसी फूट, हिन्दू-मुसलमान दंगे-फसाद, भारत-पाक के बीच के युद्ध इधर आने में आसानी प्रदान कर सकें, और आज यह बात सच दिख रही है। अब तक साम्राज्यवादी अपने मिशन में सफल हैं।

हां, तो 1965 में भारत-पाकिस्तान के बीच युद्ध इसलिए हुआ था कि कश्मीर के कुछ हिस्से पर अचानक हमला करके उसे कब्जे में ले लिया जाए और उसे आजाद करा लिया जाए।

पाकिस्तान के हिसाब से– उनके पास जो कश्मीर है वह आजाद है और भारत के पास जो कश्मीर है वह गुलाम है। पहले घुसपैठियों को प्रवेश कराया गया, जिनको सबसे पहले सपेरों के रूप में देखा गया सोपोर के आस-पास। माना गया कि शायद ये पूर्वी

पाकिस्तानी लोग थे। पाकिस्तान की योजना थी कि इनके जरिए अंदर तोड़फोड़ करवाकर पुल, रोड, आदि को ध्वस्त करवा दिया जाए और उधर से पाकिस्तानी सेना हमला करे। कारगिल क्षेत्र पर कब्जा करते हुए, आगे लेह तक जाने वाली सड़क पर कब्जा करके शेष कश्मीर से उसे अलग कर लिया जाएगा। इस दौरान घुसपैठिये जनता को भड़काकर सेना के साथ फसाद खड़ा करेंगे।

ज्यों ही यह युद्ध कश्मीर में शुरू हुआ और सेना पर दबाव बढ़ा, तो भारतीय कमाण्डरों ने एक और मोर्चा पंजाब में, ठीक लाहौर के सामने, खोल दिया ताकि पाक सेनाओं को पीछे से घेरा जा सके। यह मोर्चा अपनी कार्यवाही इतनी तेज गति से करने लगा कि देखते ही देखते भारतीय सेनाएं पाकिस्तान में इच्छोगील नहर को पार करके लाहौर के नजदीक जा पहुंचीं। एक और तीसरा मोर्चा राजस्थान में बाड़मेर गड़रा रोड भुनाबाव की तरफ खोलकर हमारी सेनाएं बड़ी तेज गति से आगे बढ़ने लगीं। अब पाक सेनाएं कश्मीर लेना भूल गईं और उन्हें अपना बचाव करना मुश्किल हो गया। पंजाब और राजस्थान दोनों ही मोर्चो पर हमारी सेनाएं पाकिस्तान में काफी दूर तक अंदर चली गई थीं। लाहौर भारतीय तोपों की रेंज में था। राजस्थान में हमारी सेनाएं पाकिस्तानी कस्बा गड़रा सीटी से आगे जा पहुंची थीं।

स्त्री-पुरुष की स्थिति

इधर जब बच्चा पैदा होता है तो खुशी में सबसे पहले चांदी के कड़ों से कौसे (कांसे) की थाली बजाई जाती है। घर द्वार के दोनों तरफ दो चिन्ह बनाए जाते हैं- एक सूर्य का और दूसरा स्वस्तिक का। (यह स्वस्तिक जैनियों का अपना प्रतीक चिन्ह है। हिटलर का भी यही प्रतीक चिन्ह था, लेकिन उल्टा किया हुआ।)

बच्ची को दूसरे दर्जे का हक हासिल है। बच्ची पैदा होने पर मां अपने-आपको परेशान महसूस करती रही है। अब तो बच्चियों की

सुरक्षा के लिए भ्रूण-हत्या के खिलाफ कानून भी बन गया, फिर भी बच्ची पेट में ही जांच कर बाहर कर दी जाती है। यह किसानी करने वाली जातियों में ज्यादा होता है, लेकिन अब बाकी कौमों और ब्राह्मण-बनियों में भी लड़कियों का अनुपात कम होने लगा है। इस कारण जवान लड़के बिना शादी ही रहने लगे हैं। वे बाकी समाज के लिए अशान्ति पैदा करने के आधार बनते जा रहे हैं। घुमक्कड़ जातियों में यह कमी नहीं है।

शादी के समय दहेज का प्रचलन खूब है। दहेज को लेकर इस आर्थिक युग में मारा-मारी हो रही है। लड़की एक समस्या समझी जाती है। औरतें पति के लिए व्रत-उपवास रखती हैं। वे प्रार्थना करती हैं कि हे भगवान, इसे जिन्दा रखना। मर्द औरत के लिए कोई व्रत-उपवास या प्रार्थना नहीं करता, जबकि अब उनकी भारी कमी व जरूरत महसूस हो रही है। हालत यह है कि महाराष्ट्र आदि के आदिवासी इलाकों से लड़कियां खरीदकर इधर लाई जा रही हैं।

कर्मकांड में फंसा समाज

बूढ़े आदमी की मौत के बाद इधर पंडित नौ-दस दिन लगातार 'गरुड़ पुराण' सुनाता है। सारा कुनबा, रिश्तेदार उसके चारों तरफ बैठकर मौत के शांति-साये में इसे सुनते हैं– इन्सान की उत्पत्ति से लेकर मौत के बाद स्वर्ग-नरक में जाने की दास्तान।

महाराज इस प्रकार बयान करते हैं–

एक बार भगवान विष्णु बोले, "अहो नारद, पृथ्वी पर पापों का भार बढ़ गया है। इससे वह कांपने लगी है। अनिष्ट की आशंका है।"

तब नारद मुनि ने हाथ जोड़कर कहा, "महाराज, अगर कोई प्राणी पाप का भागी बन जाए तो क्या जीते जी उससे छुटकारा सम्भव है?"

तब भगवान विष्णु बोले- "अहो नारद मुनि, आप मनुष्य-मात्र की

भलाई के लिए बैठे हो। अच्छो सवाल करो है। तो सुन– अगर कोई पाप करे जीते जी तो फिर ब्राह्मण आदि को गऊ–दान देने से वह पापों से मुक्ति पा सकता है। अगर कोई पापी 'नारायण–नारायण' उच्चारण करे बार–बार, हजार बार तो पापों से छुटकारा मिल सकता है।"

हर बात की तरह लोगों ने इस कथा–प्रसंग के दो अर्थ निकाले। जो तीक्ष्ण बुद्धिवाले चालाक लोग थे, उन्हें पता चला कि दान देने या राम–राम करने से पाप धर्म में बदल जाते हैं। सो वे दिन भर जी–भर पाप करने लगे और हर सुबह गायों को घास डालकर, मंदिरों में जाकर पूजा–पाठ व राम–राम करने लगे। वे पाप धोकर पवित्र होकर फिर अगले दिन नए पाप करने को तैयार रहने लगे। जो जितना बड़ा दानी है, वह उतना ही बड़ा पापी है।

साधारण लोगों ने इसका दूसरा अर्थ लगाया। वे पापों से ही दूर रहने लगे। जो सच्चे, ईमानदार या कायर लोग थे, वे ठगे गए पहली किस्म के धर्मात्मा लोगों द्वारा।

शिक्षा और किसान–संघर्ष

बंगाल आदि उत्तर–पूर्वी इलाकों में अंग्रेजों का आधार था। वहां अपने सहयोग के लिए उन्होंने लोगों को शिक्षा प्रदान की। दरअसल पूंजीवाद शिक्षा में अपना विकास और सामंतवाद शिक्षा में अपना पतन देख रहा था। अतः सामंतवाद शिक्षा से लेकर सड़क, रेल, आदि सारे विकासमान आधारों का जमकर विरोध करता रहा। आजादी से पहले जब किसान गांव में स्कूल खोलकर अपने बच्चों को पढ़ाना चाहते थे, तो सामंत स्कूल तोड़ देते थे। भारत में असमान आर्थिक विकास आजादी से पहले से लेकर आजतक सतत मौजूद रहा है। साथ ही साथ रहा है विभिन्न प्रांतों में अलग–अलग विचारधारा व सोच वाले लोगों के दलों का शासन। बंगाल में आजादी से पहले जहां सीधा साम्राज्यवादी शासन था, वहां संघर्ष भी सबसे पहले शुरू हुआ। वह संघर्ष साम्राज्यवाद के ही खिलाफ

था। लेकिन राजस्थान (उस समय राजपूताना) में हालात दूसरे थे। वहां अंग्रेजी सत्ता से जनता या किसानों की कोई लड़ाई नहीं थी।

राजपूताना के सारे राजा अंग्रेजों के साथ एक साझी से बंधे हुए थे। सिर्फ भरतपुर और धौलपुर– ये दो रियासतें अंग्रेजों के काबू से बाहर थीं। कारण यह था– 1803 में द्वितीय आंग्ल-मराठा युद्ध हुआ जिसमें मराठे हार गए। हार के बाद मराठा सरदार जसवंत होल्कर

भरतपुर डींग के किले में आ छिपा। अंग्रेजों और भरतपुर के राजा के बीच युद्ध हुआ और अंग्रेज पहली बार भारत की धरती पर युद्ध हार गए। भरतपुर में हर गांव एक सैनिक इकाई थी, सो जनता टूट पड़ती थी दुश्मन पर।

बंगाल, पंजाब, आदि की घटनाओं से प्रेरित होकर भरतपुर के शासकों ने पुष्कर में सीकर, झुंझुनू और चुरू के किसानों का सम्मेलन किया और उन्हें साम्राज्यवादियों के खिलाफ संघर्ष करने को उकसाया। इस सम्मेलन पर जयपुर के राजा और अंग्रेज दोनों की नजरें थीं। इन दोनों के सामने समस्या यह थी कि इधर के सामंत न तो जयपुर के राजा को और न ही अंग्रेजों को कोई खिराज देते थे।

साम्राज्यवादियों ने एक तीर से कई शिकार करने के इरादे से बिड़लाओं के मार्फत आर्य समाजियों को कार्यशाला आयोजित कर, गीत, कहानियों, आदि के जरिए प्रशिक्षित करके किसानों के बीच उतारा। सामंतवाद और ब्राह्मणवाद के खिलाफ प्रचार कर उन्होंने बताया कि तुम्हारे सबसे बड़े दुश्मन सामंत हैं, जिनके पास तुम्हारी जमीनों का अधिकार है। उन्होंने बताया कि सामंत किसानों को लूटते हैं और ब्राह्मणवादी इस लूट व अत्याचार में मानसिक तौर पर किसानों को मूर्ख बनाते हैं। इस तरह किसानों के भाग्य में मेहनत और भूख ही लिखी है, वही होता है जो राम चाहता है, भाग्य और न्याय सूरज की किरणों के साथ उतरते हैं, आदि-आदि। साम्राज्यवादियों ने सामंतवाद को ध्वस्त व परास्त करने के लिए आर्य समाजियों से किसानों के बीच समाज-सुधार व शिक्षा का प्रचार करवाया। इससे किसानों में शिक्षा की एक ज्योति जाग उठी। वे पढ़ने के लिए गांवों में स्कूल बनाते, बिड़ला अध्यापक भेजते। उस दौरान तिलक शिक्षा समिति, मारवाड़ी रिलीफ सोसायटी, आदि ने सहयोग किया शिक्षा के प्रसार में। सामंत स्कूलों को ढहा देते। इस तरह संघर्ष शुरू हो गया शिक्षा के लिए। किसानों को साम्राज्यवादियों की शह पर जाति के आधार पर संगठित किया गया। जाट पंचायतें बनाई गईं, जो इधर राजपूत सामंतों से टकराईं। जमीन के

सवाल पर 1935 में जयपुर के राजा की फौज लेकर अंग्रेज कमांडर ने सीकर पर हमला करके यहां के सामंत को गिरफ्तार कर लिया। किसानों ने खुशियां मनाईं और सामंत के विरुद्ध जयपुर के राजा व अंग्रेजों का सहयोग किया। अंग्रेज कमांडरों ने किसानों से वादा किया कि वे उन्हें जमीन का हक दिला देंगे। जब देश में साम्राज्यवादियों के खिलाफ संघर्ष चल रहा था उस समय (1935 में) सीकर में सीधा अंग्रेज अफसर का शासन हुआ, जो कुछ दिन बाद ही एक भारतीय को उच्च पद सौंपकर वापस अपने ठिकाने पर चला गया।

जब सीकर पर अंग्रेजों का शासन कायम हो गया तो आर्य समाजी अपना बोरिया-बिस्तर समेटकर रवाना हो गए, यह कहते हुए कि अब हमारा काम हो गया। शीघ्र ही पंचायतें भंग कर दी गईं। 1947 में किसान सभा का गठन कर किसान संघर्षों को आगे जारी रखा गया और सामंतों के साथ जमीनों के लिए खूनी संघर्ष हुए। जिस जमीन को वे जोतते थे, आजादी के बाद इसी संघर्ष के बल पर उन्हें उसका खातेदारी का हक मिला।

पानी : संघर्ष, पर्यावरण और जिद्द

यहां पानी रोज बड़े संघर्ष के बाद प्राप्त होता रहा है। पहले रेगिस्तान में पानी गहरे कुंएं खोदकर या फिर तालाबों में भंडार करके प्राप्त किया जाता था। आजादी के बाद पंजाब से चलकर हरियाणा होती हुई राजस्थान नहर हनुमानगढ़, गंगानगर, बीकानेर आदि के रेगिस्तान को चीरती हुई जैसलमेर के रामगढ़ कस्बे तक गई। रेगिस्तान में पानी मिलना आसान हुआ। साथ ही इस नहर के पानी ने राजस्थान के किसानों में एक संघर्ष को जन्म दिया। इस रेगिस्तान में पानी की बड़ी-बड़ी झीलें भी हैं, जिनसे आजतक यहां के बड़े-बड़े शहर पीने का पानी प्राप्त करते रहे हैं। हर बड़े शहर के आसपास कोई न कोई पानी की झील रही है। (जैसे, बीकानेर के पास कोलायत, जोधपुर के

पास कायलाना, अजमेर के पास पुष्कर, जयपुर के पास रामगढ़, उदयपुर के पास पिछोला झील।) लेकिन अब ये झीलें बीमार और बूढ़ी होकर दम तोड़ती जा रही हैं। पानी का अब नया इन्तजाम हो रहा है नए बांध बनाकर। परिणामतः नदियां दम तोड़ रही हैं। रेगिस्तान में कई जगह जमीन की गहराई से खारा (नमक-युक्त) पानी निकलता है, जो पीने लायक नहीं होता। कुछ जगहें ऐसी भी हैं, जहां जमीन के नीचे चार सौ फुट गहराई से पानी निकाला जाता है। यह उस पानी के मुकाबले इतना स्वच्छ, स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्द्धक है जो जमीन के ऊपर आसानी से मिल जाता है।

प्रदूषण जन-जीवन के लिए बहुत बड़ा खतरा है। यह इलाका (रेगिस्तान) उद्योगों के लिए माफिक न होने के कारण अब तक अपनी हवा (जो दूर पाकिस्तान की तरफ से आती है सीमाएं लांघती हुई) को स्वच्छ बनाए हुए है, ठीक उसी अनुपात में जितनी हिमालय की हवा ठंडी व स्वच्छ है। पानी व पर्यावरण को इधर लोगों में जान की बाजी लगाकर भी बचा लेने की परंपरा रही है। आज भी वह मरी नहीं है, बल्कि कई गुना ज्यादा जोश के साथ जिन्दा है।

जोधपुर के पास एक गांव है खेजड़ी। वहां के लोग राजाओं के राज में 'जॉटी' वृक्ष को बचाने के लिए कुर्बानी देते रहे। कहते हैं कि लोग एक के बाद एक उस जॉटी के पेड़ के साथ लिपट जाते। वे इन्हें अपनी बाहों में लेते। काटने वाले पेड़ नहीं इंसान के सिर, शरीर और हाथों को काटते। कहते हैं कि लगभग 125 आदमियों ने कुल्हाड़ियों के नीचे अपने सिर देकर एक वृक्ष को बचाया। हिरणों के टोल के टोल खेतों में खड़ी खेती बर्बाद करते रहते हैं, लेकिन इधर के किसान इन पशुओं के प्रति लगाव के कारण शिकारियों को उन्हें मारने नहीं देते। अगर इन्हें कोई मारने की कोशिश करता है, तो वे मुकाबले में अपनी जान की बाजी लगा देते हैं। जिद्द इनके स्वभाव में है। सभ्य आदमी के लिए यह घाटे का सौदा है। अगर सभ्य लोगों की तरह ये लोग (किसान) समझदारी से काम लेकर संघर्ष से बच निकलें, तो न तो खेती

संभव है और न ऊंट-घोड़ा आदि को अपने काबू में लेकर उन पर सवारी। खेत में फसल के साथ संघर्ष करते हुए दिन में कई बार खून खाल से बाहर आकर आंसुओं की तरह टपकता है, और वह जिद्दी आदमी उफ्फ तक नहीं करता। यह कटे हुए भाग को मुंह में लेकर चूस लेता है, उस पर रेत लगाता है और तत्काल काम में जुट जाता है। अगर घाव बाहर है, तो कपड़े की पट्टी या फिर ऑक (एक पौधा) की छाल बांधकर तत्काल काम में जुट जाता है। वह अज्ञानी है। उसे टीटनस आदि की अभी कोई ज्यादा जानकारी नहीं है, अतः उसे भय भी नहीं है। अगर शरीर भयभीत नहीं है, तो उसमें कीटाणु भी ज्यादा देर जिन्दा नहीं रह सकते। शरीर स्वस्थ रहने के लिए अपनी लड़ाई खुद भी लड़ता है।

एक अवधारणा है कि अगला विश्व-युद्ध पानी के लिए होगा। पानी के लिए कितना क्या होगा, मगर तेल के लिए तो युद्ध हो चुका है। पानी के लिए इधर राजस्थान में संघर्ष है। इन तीन-चार सालों में पानी के लिए संघर्ष के दौरान करीब 25 लोग सरकार की लाठियों व गोलियों के शिकार हुए हैं।

पशु और किसान का रिश्ता

इस देश के किसानों को विकास के नाम पर ही नहीं, धर्म के नाम पर भी खूब बर्बाद किया गया। किसानों को धर्म की दुहाई देकर कहा गया कि बाकी पशुओं (भैंस-बकरी आदि) के मुकाबले गाय माता है, उसको बचाकर रखना धर्म है, और इधर रेगिस्तान में कानून बना दिया गया कि गाय और बछड़ों (जो तीन साल से छोटे हैं) को देश के दूसरे हिस्सों में नहीं भेजा जा सकता है। पहले पशुधन को बेचकर किसान अपनी आजीविका चलाता था। इस कानून के बाद उसके सामने संकट खड़ा हो गया- अब क्या करे, गाय व बछड़ों को क्यों पाले? गायों के जीवन पर संकट खड़ा हो गया। आवारा गायें रात को किसानों के खेतों में खड़ी फसलों को पैरों तले रौंधते हुए बर्बाद करने लगीं। तब तत्ववादी लोगों ने गाय को बचा लेने की गुहार लगाई।

जगह-जगह गऊशालाएं बना दी गईं, जहां आवारा गायों की बाड़ाबन्दी करके उनकी व्यवस्था के नाम पर चंदा, सरकारी सहायता, चारा, किराया आदि लेना एक नया व्यवसाय बन गया।

चाहे बिजली का सवाल हो; चाहे गंगानगर, धड़साना आदि में नहरी पानी का सवाल हो; चाहे गाय-बछड़ों की बिक्री का सवाल हो– इस रेगिस्तानी इलाके में शेष भारत से ज्यादा ही सक्रिय संघर्ष होते रहे हैं। इसका कारण यह रहा है कि यहां आजादी के समय जमीन के सवाल पर किसानों ने एक सफल संघर्ष किया और सामंतों से जमीन का हक एक व्यवस्था-परिवर्तन (1947) के बाद प्राप्त किया। उस दौर में इधर जो किसान नेता हुए, उनका मानना था कि किसी भी संघर्ष को जीतने के लिए मैदान को लाशों से पाटना अनिवार्य शर्त नहीं है। संघर्षों का असली नायक वह है, जो लड़ाई लड़ने से पहले ही जीत ले।

एक ऐसे ही संघर्ष का नमूना मैं यहां पेश करने की कोशिश करूंगा– जिसमें सांप मर गया और लाठी भी नहीं टूटी।

इस रेगिस्तान में बड़े-बड़े मेले लगते हैं पशुधन को बेचने के लिए। पुष्कर का मेला एक झील के किनारे लगता है। यहां देश-विदेश के सैलानी आते हैं मेला देखने और लाखों घोड़े-ऊंट आदि आते हैं बिकने। इसके बाद परबतसर में बहुत बड़ा पशु-मेला लगता है। यहां एक वीर तेजा का समाधि-स्थल है। इसने सामन्ती काल में गायों की रक्षा में अपने प्राणों की आहुति दी थी। आज लोग देवता के रूप में इसकी पूजा करते हैं।

1857 के संग्राम में बालाजी बाजीराव सीकर, चुरू व बीकानेर की सीमा पर अंग्रेज कर्नल होम्स की सेनाओं के कमांडर मेजर मॉड के साथ लड़ते हुए शहीद हुए। आज सालासर में बहुत बड़ा बाला जी मंदिर है। ये अब लोक-देवता के रूप में पूजे जाते हैं। यहां साल में दो बार मेला लगता है। यहां दूर-दूर से (हरियाणा-पंजाब से लेकर असम-बंगाल तक के) मारवाड़ी यात्री आते हैं। खैर।

बात परबतसर मेले की

इधर मेलों में जाकर राजनेता भाषण देते रहते हैं, क्योंकि वहां श्रोता मौके पर मौजूद मिल जाते हैं। इधर के किसान नेताओं ने भी मेले के मौके पर अपनी बात किसानों के सामने रखी। मेले में हजारों पशुपालक बिक्रेता राजस्थान से और ग्राहक हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश तक के मौजूद थे। पशुपालन इधर का मुख्य पेशा है खेती के साथ।

सभा समाप्ति पर हरियाणा व उत्तर प्रदेश की तरफ के तीन-चार काश्तकार एक साथ खड़े हो गए और बोले– "ले भाई, भाषण भौत सूणे- पर इतना गजब भाषण आजतक किसी नेता के मुंह से ना सुना। पर भाई अकेले भाषण से काम ना बणै। कुछ हमारा काम करके बताओ, तब जाकर मानें कि आप बाकी नेताओं की तरह भाषणबाज नहीं, बल्कि आपमें कुछ करके दिखाने की क्षमता भी है।"

"हमारे सामने एक बड़ी भारी समस्या है," अब पशुपालक भी सभा के बीच खड़े हो गए और बोले, "हम गाय व बछड़े पालते हैं, पर सरकार हमें उन्हें बेचने नहीं देती है। ये पाले हुए बछड़े और गाय हमारे गले की फांसी बन चुके हैं। अब हम उनका क्या करें?" खरीददारों ने कहा, "अगर हम खरीदकर ले जाने की कोशिश करते हैं, तो उन्हें पुलिस कानून या फिर गैर-कानूनी के नाम पर रोक लेती है। अगर पुलिस की नजरों से बचकर निकल भी जाते हैं, तो फिर शिव सैनिक धर्म के नाम पर रोककर परेशान करते हैं, और आगे नहीं जाने देते। बताओ हम क्या करें? कोई समाधान है या खाली भाषण ही भाषण है?" अब नेताओं के सामने ऐसा सवाल था, जो आश्वासन नहीं तत्काल हल मांग रहा था।

नेताओं ने मेला मजिस्ट्रेट को मौके पर बुलाया और समस्या का समाधान देने की बात कही। मेला इंचार्ज बोला, "साहब, यह मेरे बस की बात नहीं। इसका समाधान तो राज्य सरकार ही कर सकती है। आप लीडर हैं, आप ही करें सरकार से बात। हम तो कर्मचारी हैं।"

अब गेंद फिर नेताओं के पाले में थी। नेताओं ने सोचा और सभा में बैठे किसानों को कहा, "इसके लिए हम राज्य सरकार से बात करके कल फिर आपके पास आकर जवाब देंगे।"

तब सभा में खड़ा होकर एक किसान बोला, "आज तक जो नेता कल की बात कहकर गया, वापस आया नहीं। एक बार और देख लेते हैं आपका कल कितनी दूर है।" नेता सभा-स्थल से आश्वासन देकर रवाना हो गए। वहां से आकर मकराना रेस्ट हाऊस में नेता रुके और प्रांत सरकार से टेलीफोन पर बात करने लगे। जवाब आया कि यह सवाल राज्य सरकार की सीमाओं से बाहर है। हाईकोर्ट का स्टे है, इस बात को लेकर कि तीन साल से छोटा कोई बछड़ा खरीदा-बेचा नहीं जा सकता और न प्रांत से बाहर भेजा जा सकता है।

मैं वहां नेताओं के साथ मौके पर मौजूद था। अब नेताओं की समझ से भी सवाल बाहर था कि इसका जवाब व समाधान क्या हो सकता है। नागौर जिले के एस.पी. बराबर किसान नेताओं के संपर्क में थे कि क्या हो रहा है। पर कोई समाधान न था। अतः दूसरे रोज जल्दी ही रेस्ट हाऊस में एक पुलिस अधिकारी आया व पूछने लगा, "साहब, अब आप क्या करेंगे आज आगे?" नेताओं का जवाब था, "मेला-स्थल पर जाएंगे, किसानों की सभा करेंगे, लाखों किसानों के सामने बता देंगे कि स्थिति क्या है सरकार और न्यायालय की। उसके बाद किसान सभा में जो भी फैसला लेंगे, हम वैसा ही करेंगे। अगर किसानों ने तय किया कि जयपुर की तरफ कूच करना है, तो हम आगे हो जाएंगे, हजारों-लाखों किसान हमारे साथ होंगे और फैसला कर लेंगे, जो भी होगा।"

अब पुलिस और मेला-प्रशासन भारी दबाव में था। नेता नहा-धोकर कोई दस बजे मेला के सभा-स्थल पर पहुंचे। देखकर आश्चर्य हुआ, किसान नेताओं की जै-जैकार कर रहे थे। वे कह रहे थे कि हमने आज तक ऐसे लीडर ना देखे भाई, जो इतनी जल्दी फैसला करवा दे। मेरी समझ में कुछ न आया कि क्या फैसला हुआ

है और न नेताओं को पता था कि फैसला क्या हो गया है। किसान धड़ाधड़ बछड़े बेच रहे थे, ग्राहक खरीद रहे थे और खुशियां मनाई जा रही थीं। पता चला कि अखबार में खबर छपी है कि "बछड़ों की खरीद पर से रोक हटी।" मुझे तो पता न चल सका कि यह खबर अखबार में किसने छपवाई, बाकी हाईकोर्ट का स्टे तो अपने स्थान पर कायम था। खैर! अखबार की खबर ने समस्या का समाधान कर दिया। मेले में किसानों की समस्या का तो समाधान हो गया, लेकिन अब मेला-प्रशासन के सामने समस्या खड़ी हो गई कि जब तीन साल से कम उम्र के बछड़ों की खरीद पर रोक है, तो फिर प्रशासन की नाक के नीचे कानून का उल्लंघन हुआ है, उसकी सजा भोगनी पड़ेगी। मेला मजिस्ट्रेट खुद चलकर नेताओं के पास आया और बोला, "सर, हमारे सामने आपने समस्या खड़ी कर दी। हमारी नौकरी का सवाल है। हाई कोर्ट के स्टे का मामला है। अब क्या होगा?"

नेताओं ने कहा, "यह कोई बड़ी समस्या नहीं है, जितनी बड़ी आपको दिखाई देती है। इंसान भयभीत होकर सोचता है, तो भय विकराल रूप धारण कर लेता है और समाधान सोचने के लिए बेचारे के पास मौका ही नहीं होता। आप समस्या को हल्के रूप में लेंगे तो उसका हल बहुत आसानी से मिल जाएगा।"

मेला इंचार्ज मजिस्ट्रेट के सामने हाथ जोड़े खड़ा था, "सर, आपका तो दिमाग फ्री है। आप हल्के रूप से सोचकर हमें भी बता दें। आपका तो कुछ न बिगड़ेगा, आप चले जाएंगे हमें फंसाकर यहां से और…"

नेताओं ने वाकई बहुत बड़े सवाल को बड़े हल्के ढंग से सोचते हुए चुटकी बजाकर हल कर दिया। पाठक को भी अगली लाईन पढ़ने तक का मौका है। वह चाहे तो मजिस्ट्रेट साहब की नौकरी बचाने का उपाय सुझा सकता है।

नेताओं ने मजिस्ट्रेट साहब को सलाह दी, "आपके मेले में जो डॉक्टर है– जो तय करता है कि पशु की उम्र कितनी है– उससे यह

लिखने को कह दो, कि बछड़े जो खरीदे गए साढ़े तीन साल से ज्यादा उम्र के हैं। कोई शिव सैनिक, पुलिस अफसर और हाईकोर्ट का जज बछड़ों के मुंह में हाथ डालकर दांत देखने की हिम्मत शायद ही करे। बाकी अगर कोई बात होगी, तो सड़कें खेतों और गांवों में से होकर ही गुजरती हैं; वहां बछड़े और किसान ही होंगे। देख लेंगे कि कौन क्या करता है– रोकता है या फिर जाने देता है।" मेला इंचार्ज के सामने अपने बचाव में इससे अच्छा दूसरा कोई विकल्प न था। इसे मान लिया गया और सारी कार्यवाही सरलता से सम्पन्न हो गई।

यहां एक विचार की पुष्टि होती है कि अगर आप असमंजस में हैं– क्या करें, क्या न करें, तो जनता के बीच जाकर खड़े हो जाओ। जनता रास्ता निकाल लेगी और आपको भी दिशा दिखा देगी कि कैसे आगे बढ़ें। □